क्रुद्ध नदी

डॉ. दीपक सिंह बिष्ट

प्रचंड जल प्रवाह में, अवरोध ध्वस्त कर चली,
प्रवाहिणी अब क्रुद्ध हो, विध्वंस कर आगे बढ़ी,
आया जो मार्ग में उसे, समग्र लील ही लिया,
अवशेष भी नहीं रहे, आकार रौद्र यूं किया,
बाँध हों या हों नगर, चल पड़ी वो जिस डगर
विनाश ही विनाश था, काल का वो ग्रास था,
दृश्य सब वीभत्स हुए, ध्वनि में करूण नाद था,
सर्वत्र त्राहि-त्राहि ही, एकमात्र सत्य था,
जीवन बना असत्य था, काल ही अब सत्य था,
शवों को नोंचने को अब, खगों को भी धरा नहीं,
प्रलय का रूप जल हुआ, जल रहा जीवन नहीं,
धृष्ट जो खड़ा रहा, दम्भ उसका तोड़ कर,
क्रोध में नदी बढ़ी, उखाड़ उसको फेंक कर,
धरा हो या पहाड़ हों, वन हों या उद्यान हों,
सभी के रूप रंग में, विकार ही विकार था,
जो कभी साकार था, उसका न अब आकार था।

मुनष्य! मेरे मार्ग को, अवरुद्ध तूने क्यों किया?
मेरे प्रेम भाव का, अपमान बोल क्यों किया?
मुझको बांध भी दिया, पथ भी तूने कस दिया,
मेरे तटों को छीन-छीन, अपना तूने कर लिया,
स्वार्थ अपना साधने में, तूने सीमा लाँघ दी,
मान मेरा भंग कर, दण्ड को आवाज दी,
अपराध ही तेरे यहाँ, कारण विनाश का हुए,
स्वर भी चीत्कार के, तेरे ही कारणवश हुए,
शक्ति मेरी जान ले, सीमाएं तू पहचान ले,
मान मेरा करना अब, दायित्व अपना मान ले,
तज के अपना लोभ तू, आदर यदि दर्शाएगा,
करती हूँ आश्वस्त मैं, पुनः नहीं पछताएगा!!
करती हूँ आश्वस्त मैं, पुनः नहीं पछताएगा!!

सपंर्क करें:
डॉ. दीपक सिंह बिष्ट
राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान,
रुड़की-247 667 उत्तराखंड